जुलाई १९९५ हिंदी पत्रिका में प्रकाशित

वार्षिक अधिवेशन, १९९५

वार्षिक धर्म-प्रसार सम्मेलन १८ से २१ जनवरी तक धम्मगिरि पर सोत्साह संपन्न हुआ। इसमें देश-विदेश के लगभग ५०० साधकों ने भाग लिया, जिनमें लगभग १०० से अधिक सहायक आचार्य आचार्या तथा ५० ज भी सम्मिलित थे।

कार्यक्रमः

१९९४ में पृथक-पृथक समितियों में लिये गये निर्णयों की प्रगति का समीक्षण किया गया। केंद्रों की रिपोर्ट्स प्रस्तुत की गयीं और उसके उपरांत अगले दो दिनों के लिए सम्मेलन का ईस्वतंत्र भागों में विभक्त किया गया – यथा सहायक आचार्य, कनिष्ठ सहायक आचार्य, धर्मसेवक और गण आदि। इनमें १९९४ के धर्म-प्रसार के कार्य का पुनरावलोकन किया गया व १९९५ के लिए नई योजनाएं बनायी गयीं। २१ को सायंकाल सम्मेलन की गतिविधियों का सारांश (प्रस्ताव-पत्र) पू. गुरुजी के सामने प्रस्तुत किया गया, जिनसे निम्न जानकारियां हुईं।

शिविर-रिपोर्ट – १९९४

वर्ष १९९४ धर्म-प्रसार के लिए एक महत्वपूर्ण वर्ष रहा। इस वर्ष भारत में २५० दस दिवसीय शिविरों का आयोजन किया गया (जबकि वर्ष १९९३ में १८० थे) तथा विदेशों में १८० (गत वर्ष १५०) शिविर लगे। इस प्रकार २४,५०० साधकों ने भारत में (गत वर्ष १८,५००) तथा अन्यत्र ८००० (गत वर्ष ७०००) साधकों ने विपश्यना से धर्मलाभ उठाया।

वर्ष के प्रमुख आकर्षणः

१. पश्चिम तथा मध्य भारत में केंद्रों के बाहर लगने वाले शिविरों की संख्या में बहुत वृद्धि हुई और केरल में पहली बार शिविर लगा।

२. भारत के बाहर दक्षिण अमेरिकी देशों – वेनेवेला, ब्राजील और अर्जेन्टिना तथा इंडोनेशिया में भी पहली बार शिविर लगे।

जेल-शिविर के आकर्षणः

१. 'धम्मतिहाड़' (दिल्ली जेल) में एक हजार से अधिक साधकों का शिविर लगा (विवरण जून,१९९४ की पत्रिका में प्रकाशित हुआ है।) तथा हर महीने दो शिविर नियमित रूपसे लगने का महत्वपूर्ण निश्चय किया गया जो विधिवत चल रहा है।

२. बड़ोदा जेल (गुजरात) में नवंबर, दिसंबर में दो शिविर, पटना जेल (बिहार) में पहली बार सितंबर, अक्टूबर में दो शिविर लगे तथा बैंगलोर जेल (कर्नाटक)में पहली बार नवंबर में एक शिविर लगा और तिहाड़ तथा रांची जेलों में केवल जेल अधिकारियों के लिए शिविर आयोजित किये गये।

बच्चों के शिविरों के आकर्षणः

१. बच्चों के शिविरों तथा उनकी बढ़ती संख्या में उल्लेखनीय (१२०प्रतिशत) की वृद्धि हुई। भारत में ११० शिविरों (गतवर्ष ५०) में लगभग ११,००० (गतवर्ष ५०००) बच्चों ने भाग लिया। इनमें लगभग दो तिहाई शिविर एक दिवसीय थे।

२. मुंबई में बेघर, गरीब बच्चों तथा बाल मुजरिमों की दो शैक्षणिक संस्थाओं में शिविर चलाये गये।

अन्य आकर्षणः

१. भारत तथा विदेश के लिए एक-एक दम्पत्ति को 'आचार्य' नियुक्त किया गया।

२. **'विपश्यना और वर्तमान विश्व पर इसका प्रभाव'** विषय पर एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन १५ से १७ अप्रेल, १९९४ को दिल्ली की 'इंडियन इंस्टिट्यूट आफ टेक्नॉलोजी' में आयोजित किया गया, (विवरण जुलाई, १९९४ की पत्रिका में प्रकाशित हुआ है।)

३. **'वर्ल्डवाइड विपश्यना विडियो प्रोजेक्ट'** द्वारा विपश्यना केंद्रों पर वीडियो फीचर तैयार करने का विशाल प्रयास आरंभ हुआ। बड़ा सराहनीय काम किया जा रहा है।

४. धर्मसेवा का प्रशिक्षण विडियो द्वारा हिंदी और अंग्रएजी में उपलब्ध कराया गया।

समितियों की रिपोर्ट्स, उपलब्धियां और प्रस्ताव

१. प्रशिक्षण-समितिः

वर्ष १९९४ में कुल चार सहायक आचार्य प्रशिक्षण कार्यशालाएं, चार कनिष्ठ सहायक आचार्य प्रशिक्षण कार्यशालाएं, दो धर्मसेवक प्रशिक्षण कार्यशालाएं और एक प्रशिक्षण कार्यशाला का आयोजन भारत तथा नेपाल में किये गये। भविष्य में भी इन्हें चलाते रहने का निश्चय हुआ।

२. बच्चों के शिविर की समितिः

वर्ष १९९३ के मुकाबले १९९४ में बच्चों के शिविर और उनकी संख्या में दुगुनी से अधिक वृद्धि हुई है। इसमें और सुधार व प्रशिक्षण के लिए आवश्यक व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत किये गये।

३. जेल-समितिः

जेलों में जो नया मोड़ आया है, इसे आगे बढ़ाया जाय तथा भारत और विश्व की अन्य जेलों में भी शिविर लगाये जांय।

४. प्रकाशन-समितिः

अंग्रेजी, हिंदी, मराठी तथा पालि-हिंदी की कुल ११ पुस्तकें प्रकाशित हुईं। स्थानीय भाषाओं के अलग-अलग संयोजक नियुक्त किये गये। केंद्रों पर तथा केंद्रों के बाहर जहां-जहां भी शिविर लगे, वहां केवल 'विपश्यना विशोधन विन्यास' द्वारा प्रकाशित साहित्य ही बेचने का निर्णय किया गया।

५. टेप एवं अनुवाद-समितिः

अंग्रेजी और हिंदी की लगभग संपूर्ण प्रशिक्षण-सामग्री की ट्रांसक्रिप्शन्स तैयार हो गयीं हैं। कई भाषाओं में इनका अनुवाद

और रेकार्डिंग्स भी हो गयीं हैं। कुछ अन्य भाषाओं में कार्य चल रहा है। पूज्य गुरुजी के वीडियो और आडियो टेप्स को दीर्घकाल तक सुरक्षित रखने के लिए आधुनिक तकनीकों के प्रयोग करने के प्रस्ताव पारित किए गये।

६. धर्म-साहित्य व उपकरण-समितिः

सहायक आचार्यों को शिविर-संचालन के लिए आवश्यक धर्म-साहित्य व उपकरण उपलब्ध कराये जा रहे हैं।

विपश्यना विशोधन परिषद-सम्मेलन

इस वर्ष 'विपश्यना विशोधन परिषद' का वार्षिक सम्मेलन २० जनवरी को हुआ। इसमें परिषद के १५ सदस्य, ५० तथा १०० से अधिक अन्य प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

'पालि संपादन मंडल' की गोष्ठी भी उसी दिन हुई। विपश्यना विशोधन परिषद की रिपोर्ट निम्न है –

पालि-समितिः

१. दीघनिकाय सेट के समस्त ११ भाग (पालि मूल, अट्ठकथा, टीका और अभिनवटीका) छपाई के पश्चात बिक्री के लिए उपलब्ध हुए।

२. मज्झिमनिकाय सेट – १२ भाग तथा संयुत्तनिकाय सेट – १२ भाग का संपादन कार्य समाप्त हुआ। अङ्गुत्तरनिकाय के १२ भाग का कार्य भी अंतिम चरण में है।

३. दो पालि कार्यशालाओं का आयोजन किया गया – प्रथम धम्मगिरि में जनवरी माह में और दूसरी जर्मनी में नवंबर माह में।

अन्य शोध-समितियों की रिपोर्टः

(क) **जेल-शिविरों में शोध –**

१. नवंबर १९९३ में प्रथम तिहाड़-जेल-शिविर के समय आई.आई.टी. दिल्ली ने एक प्रश्नावली तैयार की जो समस्त कैदी साधकों द्वारा भराई गयी। उसके अनुवर्तन से निम्न परिणाम निकले; ४२ प्रतिशत कैदियों को साधना से जीवन में नई दिशा मिली। बहुतों की शराब व धूम्रपान की आदत छूट गयी तथा बदला लेने की भावना भी दूर हुई।

२. जेल-अधीक्षक, दिल्ली द्वारा शिविर-रिपोर्ट के रूप में साधकों के अनुभव पर आधारित पुस्तक 'फ्रीडम बिहाइंड द बार' (अंग्रेजी) तथा 'सलाखों के पीछे' (हिंदी) से यह ज्ञात होता है कि विपश्यना साधना के सुखद परिणाम आये हैं।

३. जनवरी १९९४ में 'आल इंडिया इंस्टीट्यूट आफ मेडिकल साइंस' दिल्ली ने भी तिहाड़ जेल के उन १२० कैदियों पर शोध किया, जो विपश्यना-शिविर में भाग लिये थे और नियमित अभ्यास करते थे। उनकी रिपोर्ट के अनुसार विपश्यना साधना के सकारात्मक परिणाम निकले हैं।

(ख) **मानसिक स्वास्थ्य –**

१. मानसिक स्वास्थ्य से संबंधित एक परियोजना मुंबई में चल रही है जिसका नाम है 'अ प्रोस्पेक्टिव स्टडी ऑफ द इफेक्ट्स ऑफ विपस्सना ऑन द साइकोलोजिकल प्रोफाइल ऑफ मेडिटेटर्स'। इसमें ६० साधकों के ऊपर शोध हो रहा है। यह परियोजना आगे भी चलाते रहने का निर्णय लिया गया।

२. 'द एफिकेसीऑफ विपस्सना इन एडीशन टु नेचरोपैथी' – इस परियोजना की रिपोर्ट से ज्ञात हुआ कि विपश्यना साधना से स्वस्थ होने की क्षमता बढ़ती है, समता पुष्ट होती है, जिससे बीमारी, दुःख आदि में व्यक्ति का जीवन के प्रति दृष्टिकोण ही बदल जाता है।

पू. गुरुजी का समापन प्रवचन

हर वर्ष की तरह पिछले वर्ष का लेखा-जोखा देखने और भविष्य में काम करने की प्रेरणा व मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए हम लोग पुनः एकत्र हुए। परस्पर एक-दूसरे के विचारों के आदान-प्रदान द्वारा एक-दूसरे की कठिनाइयों को समझ कर समाधान कर सकने और मिलजुल कर सारी कठिनाइयों को दूर कर सही ढंग से धर्म की शिक्षा जैसे देनी चाहिए, उस ढंग से काम करना बहुत आवश्यक है। पिछले छब्बीस वर्षों में जो काम हुआ वह सचमुच ऐसे ही है जैसे महासमुद्र में कुछ एक बूंदें गिरीं। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि जो कुछ हुआ उसका अवमूल्यन किया जा रहा है। यह अपने आप में बहुत बड़ी बात हुई। यात्रा बहुत लंबी है पर उसका आरंभ तो हुआ। हजारों मील लंबी यात्रा भी पहले कदम से ही शुरू होती है। तो इस शुरुआत से एक भूमिका तैयार हुई। जैसे कि गुरुदेव (सयाजी ऊ बा खिन) कहते थे – 'धर्म का डंका बजा है।' तो इस डंके की आवाज अब फैलने लगी है। आज से २६ वर्ष पहले भारत में विपश्यना का अभ्यास करना तो बहुत दूर की बात, कोई यह शब्द ही नहीं जानता था। तो डंके की तरह धर्म की आवाज गूंजी कि 'विपश्यना भी कुछ है', यही अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि हुयी। धर्म अपने शुद्ध रूप में इस देश में ही नहीं, अनेक देशों में अपना प्रवेश पाया, यह बहुत अच्छी बात हुई। लेकिन अभी बहुत काम करना है।

इन २५-२६ वर्षों में जो एक भूमिका तैयार हुई, उस नींव पर बहुत विशाल इमारत का निर्माण करना है। धर्म विश्व के कोने-कोने में फैले और लोग उसे चख कर देखें। नए केंद्र स्थापित हों। पर यदि पुराना कोई केंद्र अभी इतना दुर्बल है कि अपने पांव पर खड़ा नहीं हो पाया है और अभी उससे लोगों को जितना लाभ मिलना चाहिए उतना नहीं मिल रहा है अथवा लाभ मिलने की जितनी क्षमता है, लोगों को उतना लाभ नहीं मिल रहा है तो पहले उसको सुदृढ़ करें। इतना उतावलापन नहीं हो कि इसके समीप ही कोई एक और सेंटर भी खोलें। मैं समझता हूं कि जहां-जहां विपश्यना के केंद्र स्थापित हुए हैं, वे केवल संख्या गिनने के लिए नहीं हैं। एक केंद्र का काम सुचारुरूप से चलने लगा, वह स्वावलंबी हुआ तो वहां काम करने वाले लोग, विशेष कर के जो वरिष्ठ सहायक आचार्य हैं या उपाचार्य या आचार्य हैं, वे अगर केवल उसी की देखभाल करते रह जायेंगे तो बात नहीं बनी, और खतरा भी है कि यह पंडे-पुजारियों का सा काम शुरू हो गया। बस बैठे हैं, अपना काम हो गया, यह चल रहा है और यह चले आगे तक। ऐसा बिल्कुल नहीं होना चाहिए। जो

सहायक आचार्य हैं वे उसमें समय अधिक दें। जो वरिष्ठ सहायक आचार्य हैं, उनको यह देखना चाहिए कि मैं बाहर जा-जा कर जहां केंद्र नहीं है, वहां शिविर लगाऊं ताकि वहां के लोग जो अन्यत्र शिविर में नहीं आ पा रहे हैं उनको धर्म चखने को मिले। तो जिसको नॉनसेंट शिविर कहते हैं या जिप्सी कैंप कहते हैं या खानाबदोश शिविर कहते हैं, अब वे अधिक मात्रा में लगने चाहिए। ऐसा होना बहुत आवश्यक है।

इस फैलाव में एक बात और बहुत ध्यान देने की है कि लोग दूसरों की सेवा करने लायक बनें। 'मुझे सहायक आचार्य, वरिष्ठ सहायक आचार्य, उपाचार्य, या आचार्य क्यों बनाया गया, ताकि लोगों की सेवा कर सकूं'। लेकिन जैसे भिन्न-भिन्न नदी का जल जब समुद्र में आ गिरता है तब 'यह उस नदी का जल है', ऐसे अलग करके नहीं देखा जा सकता। गंगा, यमुना, गोदावरी, कावेरी या जिस किसी नदी का जल समुद्र में गया, वह समुद्र का जल हो गया। उसका एक ही रस है। वैसे ही लोग भिन्न-भिन्न परंपराओं से, भिन्न-भिन्न मान्यताओं से आए हैं और उनके अपने-अपने भिन्न-भिन्न कर्मकांड रहे हैं। अगर अब तक भी वे अपने पुराने लेप लिए बैठे हैं तो खतरा हो जायेगा। फिर जाने-अनजाने वे प्रशिक्षण में कोई अपनी बात डाल देंगें। पुराना लेप अभी तक पूरा नहीं उतरा है तो उससे घृणा नहीं। लेकिन यह तो स्पष्ट हुआ कि यह मार्ग **'एकायनो मग्गो'** है। यह हमें अंतिम अवस्था तक पहुँचायेगा। सारे रागों से, द्वेषों से मुक्त करेगा। अब अपनी कोई पुरानी बात इसके साथ जोड़ेंगे तो वही दशा होगी जो भगवान बुद्ध के ५०० वर्ष बाद भारत में विपश्यना की हुई।

इसलिए बहुत सजग रहना है। अगर किसी को लगता है कि अभी भी मुझमें अपनी दार्शनिक मान्यताओं का चिपकाव है, अपने कर्मकांडों, पुरानी परंपराओं, व्रत-उपवासों का चिपकाव है – तो अभी रुक जाऊं। मैं अभी धर्म सिखाने लायक नहीं हुआ। जरा और पकूं और उसके बाद धर्म सिखाने का काम करूं। इस प्रकार स्वयं अपने आप को जांचें। नहीं तो कोई ऐसी भूल कर लेंगे जिससे लोगों की सेवा करने का जो इतना बड़ा लाभ मिल रहा है, जो इतनी बड़ी पुण्य-पारमी पुष्ट हो रही है, उसकी जगह बिल्कुल उल्टी बात हो जायेगी कि लोग सही रास्ते पर जाने लगे और हमने उनके रास्ते पर अड़चन शुरू कर दी। वे आगे नहीं बढ़ सकते। क्योंकि उनके लिए वह बात प्रमुख हो गयी, जो हमने जोड़ी है। पहले ही उनके लिए वह बात प्रमुख थी, अब हमने उसको और बल दे दिया। तो बहुत सजग रह कर काम करना है। ऐसा कभी भूल कर भी नहीं करें।

हम जिस-जिस परंपरा से आए हैं, उनके प्रति कहीं जरा सा भी द्वेष नहीं हो। उनके प्रति ऐसा न हो कि देखो वे कितने नीचे हैं और हम कितने ऊंचे हो गये। ऐसा भूल कर भी नहीं सोचें। उस समय वही बात मेरी समझ में आयी और हम उस रास्ते चल रहे थे। कुछ न कुछ हमें लाभ भी हुआ। लेकिन अब हमें यह सीधा मार्ग मिल गया जो विकारों से एकदम मुक्ति की ओर ले जा रहा है। तो जो पीछे छूट गया, वह छूट गया। उसकी निंदा भी नहीं और फिर उन्हीं विचारों के साथ जुड़ने की जरूरत नहीं। ऐसा दृढ़ निश्चय करके, हर सहायक आचार्य, हर कनिष्ठ सहायक आचार्य, हर वरिष्ठ सहायक आचार्य, हर उपाचार्य, हर आचार्य को बहुत अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि हम लोगों की सेवा करने के बदले उनकी हानि न कर दें। बहुत से लोग यह सोच कर विपश्यना साधना के प्रति आकर्षित होते हैं कि इससे इतने लोगों को लाभ हुआ है, चलो मैं भी करके देखूं और मैं उनको भरमा दूं, उन्हें किसी ऐसे जंजाल में डाल दूं तो वे आगे कैसे बढ़ेंगे? इसलिए बहुत सतर्क रह कर काम करना है। बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। इस जिम्मेदारी को समझते हुए धर्म को खूब फैलाएं। अब उसके फैलने का समय आ गया है।

कल प्रश्न हुआ था कि इन २६ वर्षों में क्या हुआ? कोई यह समझे कि हमारा समाज बदल गया, यह देश बिल्कुल बदल गया, यह आशा करनी बेकार है। लेकिन २६ वर्षों में बहुत बड़ी बात हुई। डंका बजा न! धीरे-धीरे चेतना जागी है कि विपश्यना भी एक विद्या है और इससे लाभ होता है। अब धीरे-धीरे सारे देश में फैलेगी तो अपने शुद्ध रूप में फैले। फैलाना भी है और शुद्ध रूप में फैलाना है – इन दो बातों को ध्यान में रखते हुए खूब सेवा करें। खूब सेवा करें! इससे अपना भी बड़ा मंगल होगा, बड़ा कल्याण होगा। इससे बड़ी किसी की और क्या सेवा कर सकते हैं।

एक भूखे व्यक्ति को हम भोजन का दान देते हैं, बहुत बड़ी सेवा है। बेचारा भूखा है, हमने उसे भोजन दे दिया। दूसरे दिन फिर भूखा हो गया। फिर दिया, तीसरे दिन फिर भूखा हो गया। अच्छी बात तो है, लेकिन उसके सारे दुख हम नहीं निकाल सके। प्यासे को पानी दिया, बड़ी अच्छी बात है, थोड़ी देर बाद फिर प्यासा हो गया। नंगे को कपड़ा दिया, बड़ी अच्छी बात है। कुछ समय के बाद कपड़े फट गये, फिर नंगा हो गया। अरे, यह कल्याणकारी विद्या किसी को दे दी और उसने ग्रहण कर ली और वह उस मार्ग पर चलने लगा तो सारे दुःखों के बाहर होने लगा। इससे बढ़ कर के किसी की क्या सेवा हो सकती है। इससे बढ़ कर किसी को क्या दान दे सकते हैं।

सब्बदानं धम्मदानं जिनाति – सारे दानों से सर्वोपरि धर्म का दान है। क्यों धर्म का दान? क्योंकि उससे सारे दुखों के बाहर निकल सकेगा। कोई एक छोटा-मोटा दुख – भूख का, प्यास का – इसका अर्थ यह नहीं कि अब भूखे को रोटी देना बंद कर दें, प्यासे को पानी देना बंद कर दें। हम तो विपश्यना वाले हैं। बिल्कुल नहीं। लेकिन यह समझते हुए कि एक सबसे ऊंचा दान है और वह धर्म का दान है। किसी को संप्रदाय में बांधने के लिए नहीं, किसी बेड़ी या किसी बाड़े में बांधने के लिए नहीं, बल्कि उसके कल्याण के लिए है। यह विद्या मिल जायेगी तो उसके भीतर दुख पैदा करने का जो स्वभाव है, उसके बाहर निकलता चला जायेगा। उसे ऐसा आभास होने लगेगा कि इसी जीवन में मैं दुखों से मुक्त होता जा रहा हूं। सारे संसार में धर्म को लेकर जो अज्ञान का अंधकार फैला हुआ है, दुख को ले कर जो त्राहि-त्राहि मची हुई है, उससे छुटकारा पाने के लिए धर्म जागे। लोग अपने दुखों के बाहर आएं। सारे संसार में धर्म का प्रकाश फैले, अज्ञान दूर होता चला जाय। धर्म की सही बात समझ में आती चली जाय और उसका अभ्यास करते-करते सारे लोग अपना मंगल साध लें, अपना कल्याण साध लें, अपनी स्वस्ति-मुक्ति साध लें!

(कल्याण मित्र, स. ना. गो.)